शोध-चिंतन पत्रिका: सहयोगी विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित ई शोध पत्रिका
अंक:3; जुलाई-दिसंबर, 2021; पृष्ठ संख्या : 36-48

महापुरुष श्रीमन्त शंकरदेव के बरगीतों में श्रीकृष्ण

✍ पूजा शर्मा

शोध-सार :

मध्यकालीन अखिल भारतीय भक्ति-आन्दोलन के कर्णधारों में महापुरुष श्रीमन्त शंकरदेव (ई॰ 1449-ई॰ 1568) अन्यतम हैं। एकशरण भागवती वैष्णव धर्म (एकशरण नाम धर्म) के प्रवर्तक-प्रचारक श्रीमन्त शंकरदेव मूलतः श्रीकृष्ण (भगवान् विष्णु) के परम भक्त थे। उन्होंने 'श्रीमद्भागवत' में प्रतिपादित– 'कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्' – इस तत्व-कथन को शिरोधार्य करते हुए अपने जीवन, कर्म, आदर्श और साहित्य के जरिए दुःखी-तापित जनता के लिए कृष्ण-भक्ति का अमोघ मार्ग प्रशस्त किया।

महापुरुष श्रीमन्त शंकरदेव ने एक साहित्यकार के रूप में काव्य, नाटक, गद्य और गीतों की रचना द्वारा असमीया साहित्य-भण्डार को समृद्ध किया। उनकी अनुपम सृष्टि 'बरगीत' उनके कृष्ण-भक्त-हृदय के निचोड़ माने जाते हैं। ये बरगीत शास्त्रीय संगीत के रूप में पूर्वोत्तर भारत ही नहीं, अपितु पुण्यभूमि भारतवर्ष के कोने-कोने में समादृत हैं। स्वनिर्मित ब्रजावली भाषा में शास्त्रीय रागों एवं तालों के सन्निवेश के साथ महापुरुष श्रीमन्त शंकरदेव ने अपने बरगीतों में आराध्य प्रभु श्रीकृष्ण के अलौकिक रूप-सौन्दर्य, गुण-माहात्म्य, लीला-क्रीड़ा, आत्म-समर्पण के भाव तथा संसार के प्रति विरक्ति, अपने खेद-पश्चाताप-दीनता के भावों को काव्यात्मक सरसता के साथ मर्मस्पर्शी रूप में प्रस्तुत किया है। अपने आराध्य प्रभु श्रीकृष्ण के लिए गोपाल, हरि, गोविन्द, राम, यादव, नारायण, माधव, मधाइ, मुरारू, केशव, कमललोचन, गोपिनी-प्राण जैसी आख्याओं का प्रयोग करते हुए अपने को उनका किंकर (दास) कहते हुए वे नहीं थकते – "*कृष्ण किंकर, शंकर कह, भज गोविन्दक पाय।*" प्रस्तुत शोधालेख में व्याख्यात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धतियों के माध्यम से विचाराधीन विषय पर समुचित अध्ययन किया गया है।

बीज-शब्द : *महापुरुष श्रीमन्त शंकरदेव, बरगीत, प्रभु श्रीकृष्ण, विविध पहलू।*

प्रस्तावना :

बहुआयामी व्यक्तित्व के अधिकारी महापुरुष श्रीमन्त शंकरदेव एक साथ कवि, समाज-सुधारक, धर्म-प्रवर्तक, शासक, नाटककार-अभिनेता, संगीतज्ञ तो थे ही, पर मूलतः वे भगवान् विष्णु के पूर्णावतार श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त थे। अपने आराध्य के प्रति सर्वतोरूपेण समर्पित भक्ति-भाव रखते हुए उन्होंने श्रीमद्भागवत् में प्रतिपादित 'कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्' तथा श्रीमद्भगवत् गीता में कथित 'सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं ब्रज' को मूल-मंत्र-रूप में ग्रहण किया। विशुद्ध भागवती धर्ममतवाद के रूप में 'एकशरण भागवती वैष्णव धर्म' का प्रवर्तन करते हुए उन्होंने असमीया जन-मानस को वर्ण-जाति-कुल-भेदाभेद से ऊपर उठाकर भक्ति-अध्यात्म के क्षेत्र में समानाधिकार देने का महान प्रयास किया है।

प्रसिद्ध बारहभूयाँ के शिरोमणि एवं प्रशासक के रूप में श्रीमन्त शंकरदेव भौतिक सुख-समृद्धि का जीवन व्यतीत कर सकते थे, परन्तु अपने आराध्य श्रीकृष्ण की भक्ति के प्रचार-प्रसार तथा जन-गण की दुःख-दुर्दशा के कारणों के निराकरण हेतु उन्होंने राजकुमार सिद्धार्थ की भाँति इस भौतिक विलासिता को तृणवत् तुच्छ समझकर त्याग दिया। इसीलिए असमीया के सुप्रसिद्ध साहित्यकार 'रसराज' लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा ने सिद्धार्थ-गौतम बुद्ध के साथ शंकरदेव की तुलना करते हुए लिखा है-

> भारतबर्षत राजपाट आरु सांसरिक सुख संपद बिसर्जन दिओता एक सिद्धार्थ गौतम बुद्धर बाहिरे एने दृष्टांत केइटा आछे ? बुद्धर सैते हे आमार शंकरदेवर तुलना हय।
>
> (बेजबरुवा 2010 : 5)

(यानी, भारतवर्ष में राज-सिंहासन और सांसारिक सुख-सम्पदाओं का त्याग करने वाले सिद्धार्थ गौतम के अलावा ऐसे कितने उदाहरण हैं? बुद्ध के साथ ही हमारे शंकरदेव की तुलना की जा सकती है।)

श्रीमन्त शंकरदेव बारह वर्षों के तीर्थाटन के दौरान विभिन्न धार्मिक मतवादों का परिचय ग्रहण कर, अनेक साधु-संतों के संस्पर्श से आलोकित होकर जब लौटे तब अपने धर्ममत के प्रचार हेतु बरदोवा में ही उन्होंने नामघर-मणिकुट

की स्थापना की। त्रिहूत के जगदीश मिश्र द्वारा अर्पित 'श्रीमद्भागवत्' की टीका 'भावार्थ दीपिका' को ही मूल रूप से आधार मानकर वे इस धर्म के प्रचार-प्रसार हेतु 'कीर्तन-घोषा' के अलग-अलग खण्डों तथा अन्य काव्य-कृतियों की रचना में प्रवृत्त हुए।

महापुरुष श्रीमन्त शंकरदेव का साहित्य वस्तुतः उनके परम आराध्य श्रीकृष्ण के गुणानुकीर्तन का प्रमुख साधन है, उस परब्रह्म के प्रति सबको एकाग्रचित्त होने हेतु आह्वान करने का मुख्य माध्यम है। साहित्य-सर्जना श्रीमन्त शंकरदेव का मूल उद्देश्य नहीं था, वरन् उसके माध्यम से उनके कृष्ण-भक्ति-विह्वल मन के स्वतःस्फूर्त भावों को अंकित करने का कलात्मक साधन भर था। कृष्ण-भक्ति के प्रचार के बहाने ही सही असमीया साहित्य उनके द्वारा विरचित काव्यों, नाटकों, भजन-कीर्तन-संबंधी ग्रन्थों एवं पदों से समृद्ध हो उठा। विशुद्ध असमीया और मिश्रित असमीया (ब्रजावली) में रचित उनके साहित्य को असमीया समाज में जातीय साहित्य की मर्यादा प्राप्त हुई। श्रीमन्त शंकरदेव विरचित काव्य-साहित्य में 'हरिश्चंद्र उपाख्यान', 'रुक्मिणीहरण काव्य', 'बलिछलन', 'अमृत मंथन', 'अजामिल उपाख्यान' और 'कुरुक्षेत्र' उल्लेखनीय हैं। उनके भक्तितत्व-विषयक संग्रहों के अंतर्गत 'भक्तिप्रदीप', 'भक्ति रत्नाकर' (संस्कृत) और 'निमि-नवसिद्ध संवाद' आते हैं। अनूदित कृतियों में भागवत् के प्रथम, द्वितीय, षष्ठ (अजामिल उपाख्यान), अष्टम (बलिछलन, अमृत मंथन), दशम, एकादश और द्वाद्वश स्कंध तथा 'उत्तरकाण्ड रामायण' का उल्लेख किया जाता है। शंकरदेव-कृत अंकीया नाटक हैं – 'पत्नीप्रसाद', 'कालियदमन', 'केलिगोपाल', 'रुक्मिणीहरण', 'पारिजात हरण' और 'रामविजय'। उनके द्वारा रचित गीतों में 'बरगीत', 'भटिमा', 'टोटय' और 'चप्पय' प्रसिद्ध हैं। उनके नाम-प्रसंग-सबंधी कृतियों में 'कीर्तन' और 'गुणमाला' का उल्लेख किया जाता है।

प्रस्तुत अध्ययन में एम.एल.ए. शोध-पद्धति को अपनाते हुए मूलतः शोधपरक, व्याख्यात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धतियों का प्रयोग किया गया है। महापुरुष श्रीमन्त शंकरदेव

के समग्र साहित्य में ही उनके आराध्य श्रीकृष्ण की दिव्य छटा विराजमान है, पर विशेष रूप से उनके द्वारा विरचित बरगीतों में आराध्य श्रीकृष्ण से संबंधित अनेकानेक पहलू पूर्णरूपेण परिलक्षित होते हैं तथा उन्हीं बरगीतों तक यह अध्ययन सीमित रहेगा।

विश्लेषण :

महापुरुष श्रीमन्त शंकरदेव की सर्वश्रेष्ठ कृति 'कीर्तन-घोषा' मानी जाती है, पर उनके द्वारा विरचित 'बरगीत' भी उनके भक्त-हृदय के निचोड़ हैं –– उनकी कृष्ण-भक्ति भावमय कथा के सार-रूप हैं। यहाँ पर यह उल्लेखनीय है कि 'बरगीत' शब्द का प्रयोग श्रीमन्त शंकरदेव ने नहीं किया है, बल्कि महान, उदात्तपूर्ण, निर्मल भक्ति रससिक्त भावों से संपृक्त होने के कारण श्रीमन्त शंकरदेव और उनके परम शिष्य श्री श्री माधवदेव के परवर्ती अनुगामियों ने उनके द्वारा रचित गीतों को 'बरगीत' की आख्या से विभूषित किया। प्रथम बार की तीर्थयात्रा के दौरान 1490 ई॰ के आस-पास बदरिकाश्रम में – 'मन मेरी राम चरणहि लागु' पंक्ति वाले बरगीत-सहित शंकरदेव ने अनेकानेक बरगीतों की रचना की थी। चरित-पोथियों और लोक-परम्परा के अनुसार उन्होंने कुल 'बारह कोड़ी' यानी दौ सौ चालीस बरगीतों की रचना की थी। परन्तु, उन गीतों की पाण्डुलिपि कमला गायन नामक एक भक्त-गायक की झोपड़ी में जल जाने के पश्चात लगभग 'डेढ़ कोड़ी' यानी लगभग तीस-पैंतीस बरगीत ही स्मृति में संचित रहे। स्व-निर्मित ब्रजावली भाषा (असमीया, मैथिली और ब्रज के सम्मिश्रण से बनी कृत्रिम साहित्यिक भाषा) में शास्त्रीय रागों एवं तालों के सन्निवेश के साथ महापुरुष श्रीमन्त शंकरदेव ने अपने बरगीतों में आराध्य प्रभु श्रीकृष्ण के अलौकिक रूप-सौन्दर्य, गुण-माहात्म्य, लीला-क्रीड़ा के साथ ही उनके प्रति आत्म-समर्पण के भाव तथा संसार के प्रति विरक्ति, अपने खेद-पश्चाताप-दीनता के भावों को काव्यात्मक सरसता के साथ मर्मस्पर्शी रूप में अभिव्यक्ति दी है।

महान भारतीय संस्कृति-सभ्यता के आधार-स्तंभों में श्रीकृष्ण सर्वप्रमुख हैं। भोले-भाले गोपालक से लेकर नटखट माखनचोर, असुरों के संहारक, गोपियों के संग रास-रचयिता, प्रशासक-राजनीतिज्ञ-कूटनीतिज्ञ, पाण्डवों के दूत,

गीतोपदेशक-दार्शनिक, महाभारत-युद्ध के महानायक, प्रबल-प्रतापी द्वारकाधीश आदि से सर्वव्यापी-सर्वशक्तिमान परम प्रभु परमेश्वर तक श्रीकृष्ण के अनेक लोक-रक्षक एवं लोक-रंजक रूप सदियों से भारतीय जन-गण को रक्षित, आश्वसित एवं आह्लादित करते आए हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से उन्हें भारतीय इतिहास का सर्वाधिक शक्तिशाली व्यक्ति बताया जाता रहा है, तो आध्यात्मिक दृष्टि से उन्हें परब्रह्म नारायण विष्णु भगवान् के पूर्णावतार के रूप में स्वीकार करके भारतीय जन-गण पीढ़ी-दर-पीढ़ी उनके प्रति असीम श्रद्धा और भक्ति प्रकट करते चले आ रहे हैं।

भगवान् श्रीकृष्ण का ऐसा भव्य-चरित्र श्रीमन्त शंकरदेव के लिए परम आदर, अप्रतिम भक्ति और दिव्य आकर्षण का केन्द्र रहा। उनके यही परमाराध्य श्रीकृष्ण उनके बरगीतों के मूर्तिमान शृंगार बने। श्रीमन्त शंकरदेव ने अपने आराध्य के लिए विविध आख्याओं का प्रयोग किया है तथा उनके साथ अलग-अलग रूपों में संबंध स्थापित करते हुए मनोगत भावनाओं को भिन्न-भिन्न तरीकों से अभिव्यक्ति प्रदान की है। आराध्य श्रीकृष्ण के रूप-सौन्दर्य का वर्णन, उनके गुण-माहात्म्य का चित्रण, साथ ही उनकी लीलाओं का अंकन भी इन गीतों में हुआ है। आराध्य भगवान् श्रीकृष्ण के प्रति विनय या प्रार्थना का संयोजन भी इन गीतों में प्राप्त होता है। इनके अलावा कृष्ण-भक्ति के संदर्भ में शंकरदेव द्वारा सांसारिक असारता, खेद-पश्चाताप आदि का भी इनमें चित्रण हुआ है। इन सभी बिन्दुओं पर निम्नांकित शीर्षकों के अंतर्गत आलोकपात किया जा रहा है।

श्रीकृष्ण के लिए प्रयुक्त विविध आख्याएँ

महापुरुष श्रीमन्त शंकरदेव ने अपने आराध्य श्रीकृष्ण का सर्वशक्तिमान तथा विश्व-ब्रह्मांड-नियंता नारायण विष्णु भगवान् के पूर्णावतार के रूप में चित्रण किया है। उन्होंने अपने बरगीतों में अपने आराध्य देव के रूप-ऐश्वर्य, गुण-माहात्म्य, लीला-कार्य आदि को दर्शाने वाले गोपाल, हरि, गोविन्द, यादव, राम, नारायण, दयानिधि, हृषीकेश, माधव, मधाइ, मुरारू, श्रीपति, केशव, कमललोचन, शारंगपाणि, गोपिनी-प्राण आदि विविध आख्याओं का प्रयोग किया है। यहाँ कुछेक उदाहरण द्रष्टव्य हैं-

ध्रु॰ - जय जय यादव जल निधिजा-धव

धाता श्रुतमात्राखिलत्राता।
स्मरणे करय सिद्धि दीने दयानिधि
भुकुति-मुकुति पद-दाता।।

(चौधुरी, संपा. 1984 : 1)

(अर्थात्, यादव-श्रेष्ठ, लक्ष्मीपति, सम्पूर्ण सृष्टि को धारण करने वाले श्रीकृष्ण यानी विष्णु भगवान की जय हो। यह तत्व प्रसिद्ध है कि विष्णु भगवान के पूर्णावतार श्रीकृष्ण अखिल सृष्टि या विश्व के एकमात्र प्राणत्राता हैं। उनके गुण-युक्त नाम के स्मरण करते ही सिद्धि प्राप्त होती है; इसीलिए वे दीन-जनों के लिए दया के समुद्र समान और भक्तों को मुक्ति-पद प्रदान करने वाले हैं।)

मन मेरि राम चरणहि लागु।
तइ देखना अन्तक आगु।।

(उपरिवत् : 13)

(अर्थात्, हे मन ! तू प्रभु श्रीराम के चरणों में लग जा, उन्हीं चरणों में रमा कर। तेरे सामने ही मृत्यु-रूपी अन्त आकर खड़ा है, उसे तू नहीं देख रहा है।)

गोपिनी प्राण काहानु गयो रे गोविन्द।
हामु पापिनी पुनु पेखबो नाहि आर
सोहि वदन अरविन्द।।

(महन्त, संपा. 1988 : 153)

(अर्थात्, हे गोविन्द ! हे गोपीनियों के प्राण ! आप कहाँ चले गए ? हम पापिनी-नारियाँ अरविन्द-सम आपकी काया को अब कभी देख नहीं पाएँगी।)

यहाँ पर यह उल्लेखनीय है कि श्रीमन्त शंकरदेव ने अपने बरगीतों में भगवान् विष्णु के अनेक अवतारों में से अन्यतम प्रमुख अवतार श्रीराम को श्रीकृष्ण का सम-पर्याय मानते हुए उनका उल्लेख किया है। दूसरी बात, उन्होंने अपने इष्टदेव को परब्रह्म के रूप में स्वीकार कर दास्य भक्ति प्रकट करते हुए उनके प्रति अपनी सेवा-भक्ति-अंजलि अर्पित की है।

आराध्य श्रीकृष्ण के साथ संबंध-निरूपण

भक्त अपने भगवान् के साथ अनेक संबंध स्थापित करता है – सेवक-सेव्य का, प्रभु-दास का, प्रियतम-प्रियतमा या स्वामी-पत्नी आदि का। महापुरुष श्रीमन्त शंकरदेव ने भी अपने आराध्य देव श्रीकृष्ण को सर्वशक्तिमान परब्रह्म स्वीकार करते हुए अपने को उनका 'किंकर' (दास) माना है और उनके रूप-ऐश्वर्य एवं उनकी भक्तवत्सलता का गुणानुकीर्तन करते हुए दास्य भक्ति-भावपूर्ण

पदों की सर्जना की है। यहाँ कुछेक उदाहरण दर्शनीय हैं-

कृष्ण किंकर ओहि शंकर भाना।

बिने हरि भकति तरणी नाहि आना।।

(चौधुरी, संपा. 1984 : 9)

[अर्थात्, प्रभु श्रीकृष्ण के किंकर (दास) शंकरदेव कहते हैं कि हरि की भक्ति के बिना मुक्ति प्राप्त नहीं होती।]

जनमे जनमे हामु दासकु दास।

केशव सबहु छोड़हु मोह-पाश।।

शमनक लाइ जीव बड़ डोर।

शंकर कह हरि सेवक तोर।।

(महन्त, संपा.1988 : 133)

(अर्थात्, शंकरदेव कहते हैं कि हे केशव ! मैं जनम-जनम के लिए आपके दास का भी दास बन चुका हूँ। हे त्रिगुणातीत परमपुरुष ! मुझे संसार के सभी मोह-बंधनों से परित्राण दिलाइए। जीव प्रशान्ति के लिए आकुल-व्याकुल होकर इधर-उधर घूम रहा है, बड़ी हलचल मचा रहा है। अंततः शंकरदेव अपने आराध्य हरि से प्रार्थना करते हुए अपने को उनका सेवक कहते हैं।)

श्रीकृष्ण के रूप-सौन्दर्य का वर्णन

विश्व-ब्रह्मांड-सम विस्तृत-व्यापक, अटल जलराशि-सम गंभीर, उज्ज्वल नक्षत्र-सम देदीप्यमान, अपरिसीम, असीम, अनन्त आनन्द के कन्द प्रभु श्रीकृष्ण की विश्वमोहिनी रूप-छटा का वर्णन उनके परम भक्त श्रीमन्त शंकरदेव ने उन्मुक्त हृदय से किया है। महापुरुष श्रीमन्त शंकरदेव द्वारा प्रवर्तित 'एकशरण भागवती वैष्णव धर्म' में हालांकि मूर्ति-उपासना का निषेध है, तथापि भक्ति-भाव अर्पित करने के लिए नाम एवं कीर्तन के साथ ही, मनः-चक्षुओं से हृदय के भीतर प्रभु की भावमूर्ति का प्रत्यक्षीकरण करना आवश्यक माना गया है। अपने परमाराध्य के गरिमामंडित रूप का वर्णन करते हुए शंकरदेव ने अनेक पदों की रचना की है। कुछेक यहाँ प्रस्तुत किए जा रहे हैं-

ध्रु॰ - मधुर मुरुति मुरारू। मन देखो हृदये हामारु।

रूपे अनंगे संगे तुलना, तनु कोटि सुरुय उजियारु।।

पद॰- मकर कुण्डल गण्ड मण्डित खण्डित चान्दचारुस्मित हासा।

कनक किरीट जड़ित रतना नव नीरूज नयन विकासा।।

------x---------x--------x--------

अरबिन्द निन्दि, पाँव नव पल्लव रतन नूपुर परकाशा।

भकत परम धन, ताहे मजोक मन, शंकर एहु अभिलाषा।।

(चौधुरी, संपा. 1984 : 2)

[अर्थात्, हे मन ! हमारे हृदय में स्थित मधुर रूप वाले मुरारी (मुर नामक दैत्य के नाशक) श्रीकृष्ण को देखो। उनके सुन्दर रूप की तुलना कामदेव से की जाती है। उनका ज्योतिमंडित शरीर करोड़ों उदित सूर्यों के समान प्रतीत होता है। उनके कानों के मकर-कुंडल की झलक से दोनों कनपतियाँ शोभित हैं, उनकी मुस्कान खण्डित चन्द्र के समान सुन्दर है। उनका स्वर्ण-मुकुट रत्नजड़ित है और उनके नयन नव-विकसित कमल के समान मोहनीय हैं। कोमल नए पल्लव जैसे श्रीकृष्ण के पावों की शोभा कमलों को भी पराभूत करती है। उनमें रत्नजड़ित नूपुर भी प्रकाशमान हैं। शंकरदेव की यही अभिलाषा है कि भक्तों के लिए परम धन के समान प्रभु श्रीकृष्ण के चरणों में उनका मन मग्न हो जाए।]

ध्रु॰ - देखु सखि मधुर मुरुति हरि,

धरि अधरे पूरे मुरुरी।

पद - तनु अभिनव घन काला।

उरे लुले कदम्बकु माला।।

पीत अम्बर तड़ित ज्योति।

जले कम्बू गले गजमोति॥

(महन्त, संपा. 1988 : 156)

(अर्थात्, हे सखी, हरि की मनमोहिनी मूरत देख। श्रीकृष्ण अपने अधरों पर मुरली धारण कर तान छेड़ रहे हैं। उनका शरीर नए मेघ के समान श्याम रंग का है। उनके हृदय पर कदम्ब पुष्पों की माला विराजमान है। उनके वस्त्र विद्युत-प्रकाश की भाँति पीले रंग के हैं। उनके गले में शंख-सदृश गजमोतियों का हार चमक रहा है।)

पीताम्बर-परिवेष्टित वंशीधारी श्रीकृष्ण के रूप-सौन्दर्य के ऐसे मनोहारी चित्रण श्रीमन्त शंकरदेव के बरगीतों के प्राण-सदृश हैं। उस मूर्तिमान सौन्दर्य को अपने में पूर्णतः आत्मसात करते हुए उन्होंने ऐसे वर्णन प्रस्तुत किए हैं जिनके पठन से ऐसा प्रतीत होता है मानो संवेदना की सघनता में उनके इष्टदेव की रूपमय छवि उनके हृदयस्थल से निःसृत हो सीधे शब्द-चित्र-रूप में अंकित हो गयी हो। श्रीमन्त शंकरदेव के ये वर्णन

उनकी अप्रतिम एवं अनन्य दास्य-भक्ति से उद्‌बुद्ध अनूठी भाव-मणियाँ हैं जिनके पठन-मात्र से पाठक-गण तथा भक्त-रसिक-गण अपरिमित आनन्द की अनुभूति प्राप्त करते हैं।

श्रीकृष्ण के गुण-माहात्म्य का चित्रण

भक्ति के क्षेत्र में अपने आराध्य के गुण-माहात्म्य का वर्णन विशेष महत्व रखता है क्योंकि ऐसे वर्णनों से भक्त का मन अपने आराध्य के प्रति पूरी तरह आश्वस्त होकर उन्हीं की ओर बढ़ने लगता है। श्रीमन्त शंकरदेव ने अनेक स्थलों पर अपने इष्टदेव श्रीकृष्ण के गुण-माहात्म्य का बहुरूपेण उद्घाटन करते हुए इस संबंध में उनकी भक्तवत्सलता, भवतारण-क्षमता, दयादृष्टि आदि गुणों का बारम्बार उल्लेख किया है। साथ ही, उन्होंने अपने आराध्य के नाम एवं उनकी भक्ति की महत्ता पर भी आलोकपात किया है। यहाँ कुछेक उदाहरण लिए जा सकते हैं-

जग तारक जाकेरि नाम।
देखो जो पुनु आपुन ठाम।।
राम सुहृद सोदर माता।
जान रामेसे अभय दाता।।

(चौधुरी, संपा.1984 : 21)

(अर्थात्, शंकरदेव कहते हैं कि जिनका नाम ही संसार के सभी जनों का उद्धार करने में समर्थ है, वे स्वयं तुम्हारे अपने हृदय में बसे हुए हैं, उनको देखो। वे राम ही सुहृद, भाई, माँ-बाप सब कुछ हैं; वे ही अभयदाता हैं – यह बात समझ लो।)

ध्रु॰ - बोलहु राम नामेसे मुकुति निदाना।
भव वैतरणी-तरणी सुख सरणी
नाहि नाहि नाम समाना।।
पद॰ - नाम पंचानन नादे पलावत
पापदन्ती भयभीत।
बुलिते एक शुनिते शत नितरे
नाम धरम विपरीत।।

(महन्त, संपा. 1988 : 139)

(अर्थात्, शंकरदेव कहते हैं कि मात्र राम के नाम से ही मुक्ति संभव है। भव-सागर में पापियों को अपार कष्ट भोगना पड़ता है। भगवान का नाम नाव द्वारा आसानी से इस भव-सागर को पार करने के सुख-सदृश है; वही एकमात्र साधन है और कुछ भी उसके बराबर का नहीं है। जिस प्रकार सिंह का गर्जन सुनकर हाथी भयभीत होकर भाग जाते हैं, ठीक उसी प्रकार भगवान का नाम सुनने मात्र से मन के सारे पाप, कुसंस्कार

भाग खड़े होते हैं। एक व्यक्ति यदि भगवान के नाम का जाप करे, तो उसे सुनकर सौ व्यक्ति इस संसार के क्लेश से मुक्त हो जाते हैं। नाम का गुण-माहात्म्य विस्मयकारी होता है।)

श्रीकृष्ण का लीला-गायन

महापुरुष श्रीमन्त शंकरदेव ने अपने आराध्यदेव श्रीकृष्ण को परब्रह्म स्वीकार करते हुए उनको भगवान् विष्णु के पूर्णावतार के रूप में ग्रहण किया है तथा श्रीकृष्ण की विविध लीलाओं का बहुल रूप से वर्णन किया है। यहाँ यह ध्यातव्य है कि यद्यपि श्रीमन्त शंकरदेव ने कृष्ण-भक्ति के संबंध में मूर्ति-उपासना और कर्म-काण्ड का निषेध किया है, परंतु अपने बरगीतों एवं नाटकों (अंकीया नाट) में उन्होंने श्रीकृष्ण की लीलाओं का विशद चित्रण अवश्य किया है। शंकरदेव के दर्शन-चिंतन में श्रीकृष्ण का निर्गुण-निराकार, सर्वव्यापी-सर्वशक्तिशाली रूप ही बसा हुआ है, परंतु इन लीला-वर्णनों में उनके यही कृष्ण अपने भक्तों के निमित्त सगुण-साकार रूप में अवतरित हो उठते हैं। इन लीला-गायन-विषयक पदों में भगवान् श्रीकृष्ण की बाल-लीलाएँ, वंशी-वादन लीला, गोप-गोपिनी के संग लीलाएँ, मथुरा-गमन आदि समाविष्ट हैं। कुछेक उदाहरण द्रष्टव्य हैं-

नारायण लीला जानब कोइ
सनक सनातन चिन्ति चतुरमुह
अधिकहि विमोहित होइ।।

(उपरिवत् : 129)

(अर्थात्, हे नारायण ! आपकी लीला भला कौन समझ सकता है ? सनक, सनातन प्रभृति सिद्धगण और चारों वेदों के मर्मज्ञ चतुरानन ब्रह्माजी भी आपकी लीला पर विचार करते हुए अधिक विमोहित हो जाते हैं।)

ध्रु॰- हेरहु माई, चललि बिपिने मधाइ।
वेणु बिषाणे निशाने आवत, हरषे हरषे धेनु धाइ।।
पद॰- ओहि जग-मोदन कन्धे दधि ओदन
गोधन आगु बुलाइ।।

(चौधुरी, संपा. 1984 : 16)

(अर्थात्, हे सखी ! ध्यान से देख। मधाइ (श्रीकृष्ण) वृन्दावन जा रहे हैं। उनके द्वारा बजाए गए वेणु और विषाण की सुरीली तान सुनायी पड़ रही है। हर्ष से आवाज़ सुनती हुई गायें भी शायद उनके साथ-साथ दौड़ रही हैं। संसार के सभी जनों को आनन्द प्रदान करने वाले श्रीकृष्ण कन्धे पर दही और भात का मटका लटकाए गायों को पुकारते हुए चल रहे हैं।)

कृष्ण-प्रार्थना का संयोजन

भक्ति-आध्यात्म के क्षेत्र में भक्त-जन अपने इष्टदेव के प्रति प्रार्थना या विनय का प्रस्तुतीकरण करते प्रायः देखे जाते हैं। वस्तुतः प्रार्थना या विनय न केवल भक्ति-भाव की अभिव्यक्ति का मूल आधार होता है, बल्कि अपने आराध्य को कृपा-अनुग्रह के लिए मनाने का प्रमुख हथियार भी होता है। इसमें भक्त अपनी दीनता-हीनता का कातर स्वर में लम्बा-चौड़ा बखान करते हुए अपने आराध्यदेव की महानता-दयालुता एवं भक्त-वत्सलता का गौरवशाली वर्णन करते देखे जाते हैं। महान कृष्णभक्त श्रीमन्त शंकरदेव ने भी अपने बरगीतों में अनेकानेक स्थलों पर ऐसी प्रार्थना का संयोजन किया है। ऐसा ही एक स्थल अवलोकनार्थ प्रस्तुत है-

ध्रु॰- पावे परि हरि करहों कातरि प्राण राखबि मोर।
बिषय बिषधर बिषे जर जर जीवन नारहे मोर।।

X X X

पद॰ – कहतु शंकर ए भव सागर
पार करु हृषिकेश।
तुहो गति मति देहु श्रीपति
तत्व पंथ उपदेश।।

(उपरिवत् : 12-13)

(अर्थात्, शंकरदेव कहते हैं कि हे हरि ! मैं आपके पाँव पकड़कर आपसे विनती करता हूँ कि मेरे प्राणों की रक्षा कीजिए। विषय-वासनाओं के विष से जर्जरित मेरा जीवन अब और शेष न रहेगा। हे हृषिकेश ! इस भव-सागर से मुझे पार दिलाइए। हे श्रीपति ! मेरा मार्गदर्शन कीजिए, मुझे मति प्रदान कीजिए, मूल-तत्व का ज्ञान एवं समुचित उपदेश देकर सही पथ प्रशस्त कीजिए।)

कृष्ण-भक्ति के संदर्भ में सांसारिक असारता, खेद-पश्चाताप आदि का वर्णन

भक्ति-आध्यात्म के क्षेत्र में भक्त अपने चंचल मन को विषय-वासनाओं से हटाकर अपने आराध्य के श्रीचरणों में लगाने हेतु बार-बार कहते हैं। वे सांसारिक असारता, भोग-विलास, भौतिक-सुख आदि की निरर्थकता की बात करते हुए अपने आराध्यदेव की भक्ति के जरिए इस जीवन को सार्थक एवं धन्य करने की बात बारम्बार करते हैं। महापुरुष श्रीमन्त शंकरदेव ने भी अपने बरगीतों में अपने मन की चंचलता पर खेद-पश्चाताप व्यक्त करते हुए अनेक स्थानों पर लिखा है-

नारायण काहे भकति करों तेरा।
मेरि पामर मन माधव घनघन
घातुक पाप न छोड़ा।।

(महन्त, संपा. 1988 : 125)

(अर्थात्, शंकरदेव कहते हैं कि हे नारायण ! मैं आपकी भक्ति कैसे करूँगा ? हे माधव! मेरा पापी मन बराबर औरों की हिंसा करने का पाप-कर्म करना नहीं छोड़ता।)

मन निश्चय पतन काया।
तइ राम भज तेजि माया।।
मन इसव बिषय धान्धा।
केने देखि नेदेखस आन्धा।।
मन सुखे पाय कैछे निन्द।
तइ चेतिया चिन्त गोबिन्द।।
मन जानिया शंकरे कहे।
देख राम बिने गति नहे।।

(चौधुरी, संपा. 1984 : 14)

(अर्थात्, हे मन ! तू यह समझ जा कि इस काया का पतन निश्चित है। इसीलिए तू माया-मोह का त्याग करके राम-नाम का स्मरण कर। हे मन ! यह संसार विषय-वासनाओं का ही धंधा है। तू इसे देखकर भी नासमझी के कारण क्यों अन्धे जैसा बना हुआ है ? तूने इस पार्थिव शरीर के सुख को ही अन्तिम लक्ष्य मान लिया है। यह तेरी कैसी अज्ञानता-भरी नींद है ? तू सचेत होकर गोविन्द का चिन्तन कर। शंकरदेव अपने मन को प्रबोध देते हुए कहते हैं कि हे मन ! सोच-विचारकर देख, राम के बिना किसी प्रकार की सद्गति प्राप्त नहीं हो सकती है।)

अपने परमाराध्य की सर्वशक्तिमयता एवं भक्त-वत्सलता पर पूर्णतः आश्वस्त अनन्य कृष्ण-भक्त श्रीमन्त शंकरदेव ने ऐसे दास्य-भक्तिमय पदों के माध्यम से अपने मन को प्रबोध देते हुए एक ओर जहाँ विषय-वासनाओं तथा भोग-विलास आदि की निःसारता की बात कर इनके त्याग पर बल दिया है, तो दूसरी ओर, मोह-पाश का निवारण कर इस भव-सागर से पार कराने हेतु भगवान् श्रीकृष्ण के समक्ष विनय-प्रार्थना भी निवेदित की है।

निष्कर्ष :

महापुरुष श्रीमन्त शंकरदेव ने अपनी अन्य रचनाओं की ही तरह बरगीतों में भी श्रीकृष्ण के अलौकिक रूप-सौन्दर्य, असीम गुण-माहात्म्य, लोकरंजनकारी लीलाओं, लोकरक्षणकारी कृत्यों का कमोबेश चित्रण-वर्णन किया है। साथ ही, आराध्य श्रीकृष्ण के प्रति विनय अथवा प्रार्थनापरक निवेदन के अलावा कृष्ण-भक्ति के संदर्भ में सांसारिक असारता, माया-मोह की व्यर्थता, मन की मूर्खता एवं अविवेकी आचरणों के

लिए खेद-पश्चाताप की बातों को भी इन गीतों में स्थान दिया है। भक्त श्रीमन्त शंकरदेव के परात्पर-परब्रह्म विष्णु भगवान् के रूप में मूलतः निर्गुण-निराकार श्रीकृष्ण लोकरंजन-रक्षण हेतु अवतार-धारण के संदर्भ में सगुण-साकार से भासित होते हैं। अपने उन्हीं इष्टदेव के साथ मुख्य रूप से प्रभु एवं किंकर का संबंध स्थापित करते हुए श्रीमन्त शंकरदेव ने दास्य-भाव पर आधृत भक्ति-अंजलि अर्पित की है।

वस्तुतः 'बरगीत' महापुरुष श्रीमन्त शंकरदेव के कृष्ण-भक्तिमय हृदय के वे स्वतःस्फूर्त भावोद्गार हैं जो अपनी अपरिसीम लोकप्रियता एवं प्रभविष्णुता के कारण असमीया जन-जीवन तथा समूचे वैष्णव-साहित्य का कंठहार बने हुए हैं। आराध्य श्रीकृष्ण की तरह ही कृष्ण-केन्द्रित ये बरगीत भी काव्यमय, संगीतमय, कलापूर्ण और सर्वाकर्षण से आपूरित हैं जिनमें अवगाहन करते हुए सांसारिक राग-द्वेषों से विमुक्त होकर हम सभी मानव अनायास ही कृष्णमय बन सकते हैं।

ग्रंथ-सूची

चौधुरी, गर्गनारायण, संपा. श्री श्री शंकरदेव आरु श्री श्री माधवदेवर बरगीत. द्वितीय संस्करण. गुवाहाटी : श्रीसुरबाला चौधुरी, 1984.

बेजबरुवा, लक्ष्मीनाथ. महापुरुष श्रीशंकरदेव आरु श्रीमाधवदेव. नवीन संस्करण. गुवाहाटी : लॉयर्स बुक स्टॉल, 2010.

महन्त, बापचन्द्र, संपा. असम के बरगीत. प्रथम संस्करण. जोरहाट :स्व॰ कमलकुमारी बरुवा ट्रस्टफंड, 1988.

सम्पर्क-सूत्र :
सहायक प्रोफेसर
हिन्दी विभाग, गौहाटी विश्वविद्यालय, असम
ई-मेइल : poojasarma2015@gmail.com
मोबाइल नो॰ : 8638964510